अध्याय उनतीसवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नमः॥

"जिसकी कृपा से परब्रह्म (परमात्मा) की प्राप्ति होती है, उस सतगुरुजी को एकता के भाव से समझता है उन्ही का मन में ध्यान करता है, उस के अंतःकरण में सतगुरुजी की मूर्ति निवास करती है। अनन्य होकर आत्मभाव से उनका ध्यान करने से स्वरूप प्राप्ति होती है।"

सतगुरुजी परिपूर्ण सच्चिदानंद (परमात्मा या परब्रह्म) होने के कारण उन्हें प्रणाम करने से मन का मैल (दोष) धुल जाता है। जिस पर भगवान कृष्ण और भगवान महादेव भी अगर रूठे हो, उस की भी सतगुरुजी ने रक्षा की है, परंतु जिसका सतगुरुजी ने अस्वीकार किया हो, उसे कोई भी सँभाल नहीं पाया है। अगर सतगुरुजी कृपा न करें तो यह शरीर कैसे सुरक्षित रह पायेगा? उनकी कृपा के बिना देहबुद्धि से निर्मित क्रोध को कैसे सहें? गुरुकृपा के बिना प्राण छोड़ने से क्या लाभ, ऐसा विचार भी मन में न आने दीजिए, क्योंकि गुरु के विरह से ही तो पुनर्जन्म प्राप्त होनेवाल है। अगर एक जन्म में गुरुकृपा प्राप्त न हो जाए तो मैं हजार जन्म लूँगा परंतु हृदय में स्थित सतगुरुजी के चरणों को कभी भी नहीं छोड़ूँगा। अगर वह कृपाघन न बरसेगा तो सांसारिक सुखों का उपभोग लेकर मैं कदापि भी बच नहीं पाऊँगा। सतगुरुनाथजी, अगर आप मेरे समीप न होते तो आप के इस दास का जीवन व्यर्थ हो जाता; परंतु आप ने कृपा करके आप के इस बालक को बचा लिया। परंतु शरीर की रक्षा करना यह सच्ची कृपा नहीं है; स्वरूप (आत्मज्ञान) दिखाना यही सच्ची कृपा है। जब मुझे अनुभूति होगी की मैं यह शरीर नहीं हूँ, बल्कि इस शरीर से विभिन्न होकर ईश्वर स्वरूप हूँ, तभी मुझे गुरुकृपा प्राप्त हुई है ऐसा मैं समझूँगा। अस्तु। श्रोतागण, अब आगे बयान की हुई कहानी सुनिए, स्वयं सिद्धसतगुरुजी ही अपनी जीवनी सुना रहे हैं।

सिद्धाश्रम में बाहर गाँव से आकर रहने वाले लोगों के लिए एक नई इमारत का निर्माण किया गया था, वहाँ प्रतिदिन दूसरे गाँव से भक्तगण आकर रहते थे तथा सतगुरुजी की सेवा करते थे। सेवा करने हेतु ही भक्त वहाँ आते रहते थे, इसलिए एक से बढ़कर एक सारे सेवक उत्तम रीति से प्रेम पूर्वक

सतगुरु सेवा अर्पण करते थे। सतगुरु सेवा करने का अवसर प्राप्त होगा या नहीं ऐसी आशंका कुछ भक्तों के मन में होती थी, इसलिए वे जो भी सेवा मिलती थी उसे स्वीकारकर चोखे से करते थे। एकबार शिवप्पा नाम का एक भक्त किसी की भी सहायता के बगैर तेजी से सीढ़ी चढ़ा। जिस समय उसने सीढ़ी की अंतिम पैड़ी पर कदम रखा, उसी पल सीढ़ी फिसल गयी और शिवप्पा उँचाई से नीचे स्थित पत्थर के चबूतरे पर गिर पड़ा। चबूतरे के किनारे पर बड़े जोर से उसका सिर टकराने के कारण वह तत्काल बेहोश हो गया। सतगुरु महाराज समीप ही होने के कारण, सबसे पहले उन्होंने ही उसे देखा। शिवप्पा नीचे गिरा था और सीढ़ी उसके शरीर पर गिरी हुयी थी। किसी ने सीढ़ी उठायी तो खून की धारा बहती हुई दिखाई पड़ी। शिवप्पा के सिर पर गहरा जखम हुआ था, और उसमें से बहते हुए खून से उसका पूरा शरीर लथपथ हुआ था। सतगुरुजी ने उसपर शीत जल छिडका, फिर भी वह मृतकल्प दिखाई पड़ रहा था। अनेक उपाय करने के बावजूद भी उसे होश नहीं आया, इतने में उसकी पत्नी तथा पुत्र वहाँ पधारे और सबकुछ देखकर दुख से बावले हो गए। जब शिवप्पा ने खून की उलटी की हुई सभी ने देखी, तब उन्होंने कहा की अब उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं रही है। कोई वैद्य को बुलाने इधर उधर भागने लगा तो कोई कहने लगा की अब वैद्य की आवश्यकता ही क्या है, अब अंतिम क्रिया के लिए लकड़ी ले आईए; समाप्त हो गई बेचारे की जीवनयात्रा! गुरुचरणों में शरीर अर्पण करके वह धन्य हो गया! परंतु शिवप्पा की पत्नी तथा पुत्र सतगुरुजी की ओर देख रहे थे; दौड़ते हुए आकर वे उनके चरणों में गिर पड़े और बोले, "सतगुरुनाथजी कृपा कीजिए, आप ही हमारी रक्षा कीजिए। आप के सिवाय हमारा अपना कोई भी नहीं है। जब सब कुछ छोड़कर हम ने आप के चरणों में शरण ली है, तब आप अपना बाना कैसे छोड़ सकते हैं? कुछ भी हो, हम आप को छोड़कर कहीं भी नहीं जाएँगे, क्योंकि आप ही हमारे माँ बाप हैं। आप के चरणों में हमें जगह दीजिए।" इतनी देर तक तटस्थ होकर शिवप्पा को देखते रहने वाले सतगुरुनाथजी शिवप्पा की पत्नी के शब्द सुनते ही उठ खड़े हुए। शिवप्पा के माथे की बाईं तरफ घाव होकर वहीं से खून की धारा बहती हुई देखकर गुरुनाथजी उस के समीप आकर बैठ गए। सतगुरुजी ने जखम पर हाथ

से स्पर्श किया, तत्काल खून बहना थम गया। उसपर उन्होंने नम: शिवाय कहते हुए उसके पूरे शरीर पर हाथ फेरा। उन्होंने कहा, "लगता है इसकी आयु समाप्त हो गई है। परंतु अभी भी इसके हाथों कुछ कार्य होने वाला है। अगर उसकी थोड़ी भी आयु शेष होगी तो सतगुरुजी उसे बचा लेंगे।" ऐसा कहते हुए हाथ में थोड़ा शीत जल लेकर उन्होंने उसके चेहरे पर छिडका और स्वयं समाधि अवस्था में लीन हो गए। वहाँ इकट्ठा हुए सारे भक्तगण तटस्थ होकर खड़े रह गए, जैसे चित्र में दिखाई पड़ते हैं, उसी तरह! एक सतगुरुभक्त मरणोन्मुख हुआ पड़ा देखकर महिलाओं की आँखों से अश्रुधाराएँ बह रही थी। सभी का ध्यान शिवप्पा पर केंद्रिभूत हुआ था। इतने में एक अचरज हुआ! उसके होंठ धीरे धीरे हिले हुए दिखाई पड़े। उसके मुख से रामनाम का जाप निकला हुआ सभी ने सुना। सभी के मन में हर्ष उमड़ पड़ा। भक्त कहने लगे की सतगुरुजी महिमा अगाध तथा अवर्णनीय है; सभी ने मिलकर सतगुरुजी की जयजयकार की। सिद्धनाथजी ने कहा, "निश्चित रूप से सतगुरुजी प्रसन्न होने के कारण शिवप्पा बच गया। अब उसे किसी प्रकार का भय नहीं है।" कुछ दिनों के पश्चात शिवप्पा का स्वास्थ्य पहले जैसा हो गया और उसने अधिक प्रेम से गुरु सेवा करना आरंभ किया।

सिद्धसतगुरुमहाराजजी ने लीला करने हेतु सहज में एक मनुष्य का शरीर धारण किया था। यह मनुष्य का शरीर तो व्याधियों का उद्‌गम स्थान है। इसलिए उन्हें भी कभी कभी ऐसे रोगों का सामना करना पड़ता है। एकबार उन्हें जोरदार बुखार चढ़ा, जिससे अति कष्ट होने के कारण वे बिछाने पर कराहते हुए लेटे रहे। भक्तगण बहुत भयभीत हुए और उन्होंने विविध प्रकार की दवाईयाँ तथा गोलियाँ लाकर सतगुरुजी को दी। सारी दवाईय़ाँ और गोलियाँ लेकर सतगुरुजी ने बिछाने की नीचे रख दिया और बोले, "मैं ये दवाईयाँ कुछ देर के पश्चात लूँगा।" एक दिन एक विख्यात वैद्‌य ने उन्हें प्रभावकारी गोलियाँ दी, वे भी उन्होंने बिछाने के नीचे रख दी। भक्तगण प्रतिदिन दवाईयाँ और गोलियाँ लाकर देते थे तथा वैद्‌य भी बुखार जाँचकर गोलियाँ देकर जाते थे। परंतु रोग कुछ ठीक नहीं हुआ। एकबार वैद्‌य ने जाँचकर कहा, "महाराज, शरीर का रोग जैसा का तैसा ही है! मैंने दी हुई गोलियाँ बहुत प्रभावकारी थी, उन गोलियों से

अवश्य ही रोग ठीक हो सकता था, परंतु आप ने गोलियाँ खाई नहीं होगी, तो फिर रोग कैसे ठीक होगा? अब मैं आप से विनम्रतापूर्वक बिनती करता हूँ, कम से कम अब तो मेरी दी हुई दवाईयाँ आप खाईए, इस भक्त के शब्द सुनिए और केवल हमारे लिए ही क्यों न हो, परंतु आप अपने शरीर की रक्षा कीजिए।" उसकी बात सुनकर सतगुरुजी हँसकर बोले, "अगर आप का इतना ही अनुरोध है तो मैं सभी दवाईयाँ अभीं लूँगा।" ऐसा कहते हुए वे उठे और बिछाने के नीचे हाथ डालकर मुट्ठीभर गोलियाँ निकालकर वे सारी गोलियाँ उन्होंने एकसाथ मुँह में डाल दी। यह देखकर वह वैद्य चौंक गया और भयभीत होकर बोला, "हाय हाय! लगता है मुझ से यह अपराध ही हुआ है! व्यर्थ ही मैंने आप को दवाईयाँ लेने का अनुरोध किया।" ऐसा कहते हुए उसने स्वयं के गालों पर तमाचे मारना आरंभ किया और जमीन पर लोट गया। आसपास अनेक भक्त थे, ये सब देखकर वे सभी बहुत दुखी हो गये और कहने लगे, "अब इनके जीने की आशा करना पागलपन होगा। लगता है, हमारे पुण्य समाप्त हो गये हैं।" इतने में सतगुरुजी उठ खड़े हुए और बोले, "मुझे कोई रोग ही नहीं। किस बात को लेकर आप लोगों ने इतना शोरगुल और ऊधम मचा रखा है? मुझे कब रोग हुआ था? मुझे जन्म तथा मृत्यु नहीं है। जहाँ शरीर ही नहीं है वहाँ रोग कैसे आयेगा? मैं कौन तथा क्या हूँ ये आप समझ ही नहीं पाये हैं।" ऐसा कहते हुए वे टहलने लगे। पंद्रह दिनों से बिस्तर पर लेटे रहे सतगुरुनाथजी एक क्षण में उठकर हट्टेकट्टे हुए देखकर भक्तों के आश्चर्य की कोई सीमा ही नहीं रही। लोग कहने लगे की इस महात्मा का बयान करना असंभव है; भ्रमित होकर हम उन्हें हमारे समान ही मनुष्य देह धारण किया हुआ एक पामर समझ रहे थे। जिनके चरणों के पावन तीर्थ से हमारे भीषण रोग नष्ट होते हैं, ऐसे सतगुरुनाथजी को दवाईयाँ खिलाकर हमने बड़ी मूर्खता दिखाई। इस प्रकार सतगुरुजी की महिमा का बयान करते हुए सभी भक्तगण अपने अपने घर लौटे। कुछ लोग कह रहे थे की ये तो हमारे पुण्यकर्म हैं, जिसके कारण हमें ऐसे सतगुरुनाथजी के चरण प्राप्त हुए।

श्रोतागण, अब कहानी का लक्ष्यार्थ सुनिए। शिवप्पा को परमार्थी साधक जीवात्मा समझें; वह पृथ्वी रूपी सीढ़ी चढ़जाने के पश्चात गलती से गिर गया।

"न प्रमादादनर्नोऽन्यो ज्ञानिन: स्वस्वरूपत:॥ ततो मोहस्ततोऽहंधीस्ततो बंधस्ततो व्यथा॥१॥" आदि शंकराचार्यजी के लिखे 'विवेकचुडामणी' इस ग्रंथ में दिये गए इस श्लोक में वे कहते हैं की ज्ञानी मनुष्य को स्वरूपप्राप्ति के लिए उपासना करते समय गलती करना तथा गलत या झूठी धारणा रखना, इससे बड़ा अनर्थ कुछ नहीं हो सकता। क्योंकि ऐसी गलत धारणा के कारण मोह निर्मित होता है, उससे अहंकार तथा अहंकार के कारण बंधन और दुख अपने आप ही आते हैं। यह सारा अनर्थ एक गलत या झूटी धारणा को मन में स्थापित करने के कारण होता है। अस्तु। जीवात्मा गलती से सांसारिक पत्थर से टकराया और उसे शोरगुल तथा भय का घाव हुआ। उसी समय उसके पुत्र के रूप में विवेक पधारा; पराभक्ति रूपी (पराभक्ति: ज्ञानेंद्रिय तथा कर्मेंद्रियों की मर्यादाओं के परे स्थित वस्तुओं का ज्ञान जिस भक्ति से प्राप्त होता है उसे पराभक्ति कहते है) पत्नी भी आयी। दोनों जीवात्मा की स्थिति देखकर रोने लगे और सतगुरुजी से जीवात्मा को बचाने की बिनती करने लगे। सतगुरुजी ने बोध रूपी हाथ से स्पर्श करते ही दुख रूपी खून बहना बंद हो गया। उसके पश्चात जीवात्मा को स्वस्वरूप की स्थिति प्राप्त होते ही वह उठ गया। अब दूसरी कथा का तात्पर्य सुनिए। अंतरात्मा को सिद्धसतगुरुनाथ समझें। अविद्यारोग (अविद्या: अज्ञान) से उन्होंने स्वयं को व्याप्त किया, जिसके कारण भक्तों को वे रोगी है ऐसी भावना हुई। भक्तों ने की बोध रूपी दवाईयाँ लाकर दी। वहाँ सांख्य रूपी (सांख्य: सांख्य तत्वज्ञान का जनक कपिलमुनी है, प्रकृति तथा पुरुष इन दो तत्वों को इस तत्वज्ञान में विशेष महत्वपूर्ण समझा जाता है।) वैद्य आया और अनेक तत्वों (सांख्य तत्वज्ञान में कुल मिलाकर पच्चीस तत्वों को माना जाता है) का उपयोग करके माया रूपी आपत्ती को नष्ट करने का प्रयास करने लगा। परंतु अंतरात्मा ने उस बोध को नहीं जान लिया, उसपर भक्तों की तसल्ली के लिए उसने वे सारे तत्व निग्रहपूर्वक निगले, ये देखकर सभी दुखी हुए। उसके पश्चात अंतरात्मा ने कहा की मुझे कौन सी अविद्या सताएगी? मैं स्वयं ही कोई भी आसक्तिरहित ब्रह्म होकर हमेशा निरोगी ही हूँ। ये सुनकर सभी जीवात्माएँ तथा विभिन्न मतों वाले आनंदित हुए और बोले की इनके दर्शन से हमारे रोगों का भी निवारण हो गया; व्यर्थ ही हम इन्हें रोगी समझते थे। श्रोतागण, अब अगले

अध्याय में बयान की हुई सुरस कहानी सुनिए, ताकि इस दृश्य जगत के फैलाव का निवारण होकर यह जगत कितना मिथ्या और निरुपयोगी है यह आप समझ सकेंगे। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह उनतीसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥